गुफा में तपस्विनी के दर्शन, वानरों का समुद्र तट पर आना, सम्पाती से भेंट और बातचीत

*** लागि तृषा अतिसय अकुलाने। मिलइ न जल घन गहन भुलाने॥ मन हनुमान् कीन्ह अनुमाना। मरन चहत सब बिनु जल पाना॥2॥
भावार्थ:-इतने में ही सबको अत्यंत प्यास लगी, जिससे सब अत्यंत ही व्याकुल हो गए, किंतु जल कहीं नहीं मिला। घने जंगल में सब भुला गए। हनुमान्‌जी ने मन में अनुमान किया कि जल पिए बिना सब लोग मरना ही चाहते हैं॥2॥
*** चढ़ि गिरि सिखर चहूँ दिसि देखा। भूमि बिबर एक कौतुक पेखा॥ चक्रबाक बक हंस उड़ाहीं। बहुतक खग प्रबिसहिं तेहि माहीं॥3॥
भावार्थ:-उन्होंने पहाड़ की चोटी पर चढ़कर चारों ओर देखा तो पृथ्वी के अंदर एक गुफा में उन्हें एक कौतुक (आश्चर्य) दिखाई दिया। उसके ऊपर चकवे, बगुले और हंस उड़ रहे हैं और बहुत से पक्षी उसमें प्रवेश कर रहे हैं॥3॥
*** गिरि ते उतरि पवनसुत आवा। सब कहुँ लै सोइ बिबर देखावा॥ आगें कै हनुमंतहि लीन्हा। पैठे बिबर बिलंबु न कीन्हा॥4॥
भावार्थ:-पवन कुमार हनुमान्‌जी पर्वत से उतर आए और सबको ले जाकर उन्होंने वह गुफा दिखलाई। सबने हनुमान्‌जी को आगे कर लिया और वे गुफा में घुस गए, देर नहीं की॥4॥
दोहा :
*** दीख जाइ उपबन बर सर बिगसित बहु कंज। मंदिर एक रुचिर तहँ बैठि नारि तप पुंज॥24॥
भावार्थ:-अंदर जाकर उन्होंने एक उत्तम उपवन (बगीचा) और तालाब देखा, जिसमें बहुत से कमल खिले हुए हैं। वहीं एक सुंदर मंदिर है जिसमें एक तपोमूर्ति स्त्री बैठी है॥24॥

चौपाई :
*** दूरि ते ताहि सबन्हि सिरु नावा। पूछें निज बृत्तांत सुनावा॥ तेहिं तब कहा करहु जल पाना। खाहु सुरस सुंदर फल नाना॥1॥
भावार्थ:-दूर से ही सबने उसे सिर नवाया और पूछने पर अपना सब वृत्तांत कह सुनाया। तब उसने कहा- जलपान करो और भाँति-भाँति के रसीले सुंदर फल खाओ॥1॥
*** मज्जनु कीन्ह मधुर फल खाए। तासु निकट पुनि सब चलि आए॥ तेहिं सब आपनि कथा सुनाई। मैं अब जाब जहाँ रघुराई॥2॥
भावार्थ:-(आज्ञा पाकर) सबने स्नान किया, मीठे फल खाए और फिर सब उसके पास चले आए। तब उसने अपनी सब कथा कह सुनाई (और कहा-) मैं अब वहाँ जाऊँगी जहाँ श्री रघुनाथजी हैं॥2॥

*** मूदहु नयन बिबर तजि जाहू। पैहहु सीतहि जनि पछिताहू॥नयन मूदि पुनि देखहिं बीरा। ठाढ़े सकल सिंधु कें तीरा॥3॥
भावार्थ:-तुम लोग आँखें मूँद लो और गुफा को छोड़कर बाहर जाओ। तुमसीताजी को पा जाओगे, पछताओ नहीं (निराश न होओ)। आँखें मूँदकर फिर जब आँखें खोलीं तो सब वीर क्या देखते हैं कि सब समुद्र के तीर पर खड़े हैं॥3॥
*** सो पुनि गई जहाँ रघुनाथा। जाइ कमल पद नाएसि माथा॥नाना भाँति बिनय तेहिं कीन्हीं। अनपायनी भगति प्रभु दीन्हीं॥4॥
भावार्थ:-और वह स्वयं वहाँ गई जहाँ श्री रघुनाथजी थे। उसने जाकर प्रभु के चरण कमलों में मस्तक नवाया और बहुत प्रकार से विनती की। प्रभु नेउसे अपनी अनपायिनी (अचल) भक्ति दी॥4॥
दोहा :
*** बदरीबन कहुँ सो गई प्रभु अग्या धरि सीस।उर धरि राम चरन जुग जे बंदत अज ईस॥25॥
भावार्थ:-प्रभु की आज्ञा सिर पर धारण कर और श्री रामजी के युगलचरणों को, जिनकी ब्रह्मा और महेश भी वंदना करते हैं, हृदय में धारण कर वह (स्वयंप्रभा) बदरिकाश्रम को चली गई॥25॥

चौपाई :
*** इहाँ बिचारहिं कपि मन माहीं। बीती अवधि काज कछु नाहीं॥ सब मिलि कहहिं परस्पर बाता। बिनु सुधि लएँ करब का भ्राता॥1॥
भावार्थ:-यहाँ वानरगण मन में विचार कर रहे हैं कि अवधि तो बीत गई, पर काम कुछ न हुआ। सब मिलकर आपस में बात करने लगे कि हे भाई! अब तो सीताजी की खबर लिए बिना लौटकर भी क्या करेंगे!॥1॥
*** कह अंगद लोचन भरि बारी। दुहुँ प्रकार भइ मृत्यु हमारी॥इहाँ न सुधि सीता कै पाई। उहाँ गएँ मारिहि कपिराई॥2॥
भावार्थ:-अंगद ने नेत्रों में जल भरकर कहा कि दोनों ही प्रकार से हमारी मृत्यु हुई। यहाँ तो सीताजी की सुध नहीं मिली और वहाँ जाने पर वानरराज सुग्रीव मार डालेंगे॥2॥
*** पिता बधे पर मारत मोही। राखा राम निहोर न ओही॥ पुनि पुनि अंगद कह सब पाहीं। मरन भयउ कछु संसय नाहीं॥3॥
भावार्थ:-वे तो पिता के वध होने पर ही मुझे मार डालते। श्री रामजी ने ही मेरी रक्षा की, इसमें सुग्रीव का कोई एहसान नहीं है। अंगद बार-बार सबसे कह रहे हैं कि अब मरण हुआ, इसमें कुछ भी संदेह नहीं है॥3॥
*** अंगद बचन सुन कपि बीरा। बोलि न सकहिं नयन बह नीरा॥ छन एक सोच मगन होइ रहे। पुनि अस बचन कहत सब भए॥4॥

भावार्थ:-वानर वीर अंगद के वचन सुनते हैं, किंतु कुछ बोल नहीं सकते। उनके नेत्रों से जल बह रहा है। एक क्षण के लिए सब सोच में मग्न हो रहे। फिर सब ऐसा वचन कहने लगे-॥4॥

*** हम सीता कै सुधि लीन्हें बिना। नहिं जैहैं जुबराज प्रबीना॥ अस कहि लवन सिंधु तट जाई। बैठे कपि सब दर्भ डसाई॥5॥

भावार्थ:-हे सुयोग्य युवराज! हम लोग सीताजी की खोज लिए बिना नहीं लौटेंगे। ऐसा कहकर लवणसागर के तट पर जाकर सब वानर कुश बिछाकर बैठ गए॥5॥

*** जामवंत अंगद दुख देखी। कहीं कथा उपदेस बिसेषी॥ तात राम कहुँ नर जनि मानहु। निर्गुन ब्रह्म अजित अज जानहु॥6॥

भावार्थ:-जाम्बवान् ने अंगद का दुःख देखकर विशेष उपदेश की कथाएँ कहीं। (वे बोले-) हे तात! श्री रामजी को मनुष्य न मानो, उन्हें निर्गुण ब्रह्म, अजेय और अजन्मा समझो॥6॥

*** हम सब सेवक अति बड़भागी। संतत सगुन ब्रह्म अनुरागी॥7॥

भावार्थ:-हम सब सेवक अत्यंत बड़भागी हैं, जो निरंतर सगुण ब्रह्म (श्री रामजी) में प्रीति रखते हैं॥7॥

दोहा :

*** निज इच्छाँ प्रभु अवतरइ सुर महि गो द्विज लागि। सगुन उपासक संग तहँ रहहिं मोच्छ सब त्यागि॥26॥

भावार्थ:-देवता, पृथ्वी, गो और ब्राह्मणों के लिए प्रभु अपनी इच्छा से (किसी कर्मबंधन से नहीं) अवतार लेते हैं। वहाँ सगुणोपासक (भक्तगण सालोक्य, सामीप्य, सारुप्य, सार्ष्टि और सायुज्य) सब प्रकार के मोक्षों को त्यागकर उनकी सेवा में साथ रहते हैं॥26॥

चौपाई :

*** एहि बिधि कथा कहहिं बहु भाँती। गिरि कंदराँ सुनी संपाती॥ बाहेर होइ देखि बहु कीसा। मोहि अहार दीन्ह जगदीसा॥1॥

भावार्थ:-इस प्रकार जाम्बवान् बहुत प्रकार से कथाएँ कह रहे हैं।इनकी बातें पर्वत की कन्दरा में सम्पाती ने सुनीं। बाहर निकलकर उसने बहुतसे वानर देखे। (तब वह बोला-) जगदीश्वर ने मुझको घर बैठे बहुत सा आहार भेज दिया॥1॥

*** आजु सबहि कहँ भच्छन करऊँ। दिन हबु चले अहार बिनु मरऊँ॥ कबहुँ न मिल भरि उदर अहारा। आजु दीन्ह बिधि एकहिं बारा॥2॥

भावार्थ:-आज इन सबको खा जाऊँगा। बहुत दिन बीत गए भोजन के बिना मर रहा था। पेटभर भोजन कभी नहीं मिलता। आज विधाता ने एक ही बार में बहुत सा भोजन दे दिया॥2॥

*** डरपे गीध बचन सुनि काना। अब भा मरन सत्य हम जाना॥ कपि सब उठे गीध कहँ देखी। जामवंत मन सोच बिसेषी॥3॥

भावार्थ:-गीध के वचन कानों से सुनते ही सब डर गए कि अब सचमुच हीमरना हो गया। यह हमने जान लिया। फिर उस गीध (सम्पाती) को देखकर सब वानर उठ खड़े हुए। जाम्बवान् के मन में विशेष सोच हुआ॥3॥

*** कह अंगद बिचारि मन माहीं। धन्य जटायू सम कोउ नाहीं॥ राम काज कारन तनु त्यागी। हरि पुर गयउ परम बड़भागी॥4॥

भावार्थ:-अंगद ने मन में विचार कर कहा- अहा! जटायु के समान धन्य कोई नहीं है। श्री रामजी के कार्य के लिए शरीर छोड़कर वह परम बड़भागी भगवान् के परमधाम को चला गया॥4॥

*** सुनि खग हरष सोक जुत बानी। आवा निकट कपिन्ह भय मानी॥ तिन्हहि अभय करि पूछेसि जाई। कथा सकल तिन्ह ताहि सुनाई॥5॥

भावार्थ:-हर्ष और शोक से युक्त वाणी (समाचार) सुनकर वह पक्षी (सम्पाती) वानरों के पास आया। वानर डर गए। उनको अभय करके (अभय वचन देकर) उसने पास जाकर जटायु का वृत्तांत पूछा, तब उन्होंने सारी कथा उसे कह सुनाई॥5॥

*** सुनि संपाति बंधु कै करनी। रघुपति महिमा बहुबिधि बरनी॥6॥

भावार्थ:-भाई जटायु की करनी सुनकर सम्पाती ने बहुत प्रकार से श्री रघुनाथजी की महिमा वर्णन की॥6॥

दोहा :

*** मोहि लै जाहु सिंधुतट देउँ तिलांजलि ताहि।बचन सहाइ करबि मैं पैहहु खोजहु जाहि॥27॥

भावार्थ:-(उसने कहा-) मुझे समुद्र के किनारे ले चलो, मैं जटायु को तिलांजलि दे दूँ। इस सेवा के बदले मैं तुम्हारी वचन से सहायता करूँगा (अर्थात् सीताजी कहाँ हैं सो बतला दूँगा), जिसे तुम खोज रहे हो उसे पा जाओगे॥27॥

चौपाई :

*** अनुज क्रिया करि सागर तीरा। कहि निज कथा सुनहु कपि बीरा॥हम द्वौ बंधु प्रथम तरुनाई। गगन गए रबि निकट उड़ाई॥1॥

भावार्थ:-समुद्र के तीर पर छोटे भाई जटायु की क्रिया (श्राद्ध आदि) करके सम्पाती अपनी कथा कहने लगा- हे वीर वानरों! सुनो, हम दोनों भाई उठती जवानी में एक बार आकाश में उड़कर सूर्य के निकट चले गए॥1॥

*** तेज न सहि सक सो फिरि आवा। मैं अभिमानी रबि निअरावा॥ जरे पंख अति तेज अपारा। परेउँ भूमि करि घोर चिकारा॥2॥

भावार्थ:-वह (जटायु) तेज नहीं सह सका, इससे लौट आया (किंतु), मैं अभिमानी था इसलिए सूर्य के पास चला गया। अत्यंत अपार तेज से मेरे पंख जल गए। मैं बड़े जोर से चीख मारकर जमीन पर गिर पड़ा॥2॥

*** मुनि एक नाम चंद्रमा ओही। लागी दया देखि करि मोही॥ बहु प्रकार तेहिं ग्यान सुनावा। देहजनित अभिमान छुड़ावा॥3॥

भावार्थ:-वहाँ चंद्रमा नाम के एक मुनि थे। मुझे देखकर उन्हें बड़ी दया लगी। उन्होंने बहुत प्रकार से मुझे ज्ञान सुनाया और मेरे देहजनित (देह संबंधी) अभिमान को छुड़ा दिया॥3॥

*** त्रेताँ ब्रह्म मनुज तनु धरिही। तासु नारि निसिचर पति हरिही॥ तासु खोज पठइहि प्रभु दूता। तिन्हहि मिलें तैं होब पुनीता॥4॥

भावार्थ:-(उन्होंने कहा-) त्रेतायुग में साक्षात् परब्रह्म मनुष्य शरीर धारण करेंगे। उनकी स्त्री को राक्षसों का राजा हर ले जाएगा। उसकी खोज में प्रभु दूत भेजेंगे। उनसे मिलने पर तू पवित्र हो जाएगा॥4॥

*** जमिहहिं पंख करसि जनि चिंता। तिन्हहि देखाइ देहेसु तैं सीता॥ मुनि कइ गिरा सत्य भइ आजू। सुनि मम बचन करहु प्रभु काजू॥5॥

भावार्थ:-और तेरे पंख उग आएँगे, चिंता न कर। उन्हें तू सीताजी को दिखा देना। मुनि की वह वाणी आज सत्य हुई। अब मेरे वचन सुनकर तुम प्रभु का कार्य करो॥5॥

*** गिरि त्रिकूट ऊपर बस लंका। तहँ रह रावन सहज असंका॥ तहँ असोक उपबन जहँ रहई। सीता बैठि सोच रत अहई॥6॥

भावार्थ:-त्रिकूट पर्वत पर लंका बसी हुई है। वहाँ स्वभाव से ही निडर रावण रहता है। वहाँ अशोक नाम का उपवन (बगीचा) है, जहाँ सीताजी रहती हैं। (इस समय भी) वे सोच में मग्न बैठी हैं॥6॥

समुद्र लाँघने का परामर्श, जाम्बवन्त का हनुमान्‌जी को बल याद दिलाकर उत्साहित करना, श्री राम-गुण का माहात्म्य

दोहा :

*** मैं देखउँ तुम्ह नाहीं गीधहि दृष्टि अपार। बूढ़ भयउँ न त करतेउँ कछुक सहाय तुम्हार॥28॥

भावार्थ:-मैं उन्हें देख रहा हूँ, तुम नहीं देख सकते, क्योंकि गीध की दृष्टि अपार होती है (बहुत दूर तक जाती है)। क्या करूँ? मैं बूढ़ा हो गया, नहीं तो तुम्हारी कुछ तो सहायता अवश्य करता॥28॥

चौपाई :

*** जो नाघइ सत जोजन सागर। करइ सो राम काज मति आगर॥ मोहि बिलोकि धरहु मन धीरा। राम कृपाँ कस भयउ सरीरा॥1॥

भावार्थ:-जो सौ योजन (चार सौ कोस) समुद्र लाँघ सकेगा और बुद्धिनिधान होगा, वही श्री रामजी

का कार्य कर सकेगा। (निराश होकर घबराओ मत) मुझे देखकर मन में धीरज धरो। देखो, श्री रामजी की कृपा से (देखते ही देखते) मेरा शरीर कैसा हो गया (बिना पाँख का बेहाल था, पाँख उगने से सुंदर हो गया) !॥1॥

*** पापिउ जाकर नाम सुमिरहीं। अति अपार भवसागर तरहीं॥ तासु दूत तुम्ह तजि कदराई राम हृदयँ धरि करहु उपाई॥2॥

भावार्थ:-पापी भी जिनका नाम स्मरण करके अत्यंत पार भवसागर से तर जाते हैं। तुम उनके दूत हो, अतः कायरता छोड़कर श्री रामजी को हृदय में धारण करके उपाय करो॥2॥

*** अस कहि गरुड़ गीध जब गयऊ। तिन्ह के मन अति बिसमय भयऊ॥ निज निज बल सब काहूँ भाषा। पार जाइ कर संसय राखा॥3॥

भावार्थ:-(काकभुशुण्डिजी कहते हैं-) हे गरुड़जी! इस प्रकार कहकर जब गीध चला गया, तब उन (वानरों) के मन में अत्यंत विस्मय हुआ। सब किसी ने अपना-अपना बल कहा। पर समुद्र के पार जाने में सभी ने संदेह प्रकट किया॥3॥

*** जरठ भयउँ अब कहइ रिछेसा। नहिं तन रहा प्रथम बल लेसा॥ जबहिं त्रिबिक्रम भए खरारी। तब मैं तरुन रहेउँ बल भारी॥4॥

भावार्थ:-ऋक्षराज जाम्बवान् कहने लगे- मैं बूढ़ा हो गया। शरीर में पहले वाले बल का लेश भी नहीं रहा। जब खरारि (खर के शत्रु श्री राम) वामन बने थे, तब मैं जवान था और मुझ में बड़ा बल था॥4॥

दोहा :

*** बलि बाँधत प्रभु बाढ़ेउ सो तनु बरनि न जाइ। उभय घरी महँ दीन्हीं सात प्रदच्छिन धाइ॥29॥

भावार्थ:-बलि के बाँधते समय प्रभु इतने बढ़े कि उस शरीर का वर्णन नहीं हो सकता, किंतु मैंने दो ही घड़ी में दौड़कर (उस शरीर की) सात प्रदक्षिणाएँ कर लीं॥29॥

चौपाई :

*** अंगद कहइ जाउँ मैं पारा। जियँ संसय कछु फिरती बारा॥ जामवंत कह तुम्ह सब लायक। पठइअ किमि सबही कर नायक॥1॥

भावार्थ:-अंगद ने कहा- मैं पार तो चला जाऊँगा, परंतु लौटते समय के लिए हृदय में कुछ संदेह है। जाम्बवान् ने कहा- तुम सब प्रकार से योग्य हो, परंतु तुम सबके नेता हो, तुम्हे कैसे भेजा

जाए?॥1॥

*** कहइ रीछपति सुनु हनुमाना। का चुप साधि रहेहु बलवाना॥ पवन तनय बल पवन समाना। बुधि बिबेक बिग्यान निधाना॥2॥

भावार्थ:-ऋक्षराज जाम्बवान् ने श्री हनुमानजी से कहा- हे हनुमान्! हे बलवान्! सुनो, तुमने यह क्या चुप साध रखी है? तुम पवन के पुत्र हो और बल में पवन के समान हो। तुम बुद्धिविवेक और विज्ञान की खान हो॥2॥

*** कवन सो काज कठिन जग माहीं। जो नहिं होइ तात तुम्ह पाहीं॥ राम काज लगि तव अवतारा। सुनतहिं भयउ पर्बताकारा॥3॥

भावार्थ:-जगत् में कौन सा ऐसा कठिन काम है जो हे तात! तुमसे न हो सके। श्री रामजी के कार्य के लिए ही तो तुम्हारा अवतार हुआ है। यह सुनते हीहनुमान्‌जी पर्वत के आकार के (अत्यंत विशालकाय) हो गए॥3॥

*** कनक बरन तन तेज बिराजा। मानहुँ अपर गिरिन्ह कर राजा॥ सिंहनाद करि बारहिं बारा। लीलहिं नाघउँ जलनिधि खारा॥4॥

भावार्थ:-उनका सोने का सा रंग है, शरीर पर तेज सुशोभित है, मानो दूसरा पर्वतों का राजा सुमेरु हो। हनुमान्‌जी ने बार-बार सिंहनाद करके कहा- मैं इस खारे समुद्र को खेल में ही लाँघ सकता हूँ॥4॥

*** सहित सहाय रावनहि मारी। आनउँ इहाँ त्रिकूट उपारी॥ जामवंत मैं पूँछउँ तोही। उचित सिखावनु दीजहु मोही॥5॥

भावार्थ:- और सहायकों सहित रावण को मारकर त्रिकूट पर्वत को उखाड़कर यहाँ ला सकता हूँ। हे जाम्बवान्! मैं तुमसे पूछता हूँ तुम मुझे उचित सीख देना (कि मुझे क्या करना चाहिए)॥5॥

*** एतना करहु तात तुम्ह जाई। सीतहि देखि कहहु सुधि आई॥ तब निज भुज बल राजिवनैना। कौतुक लागि संग कपि सेना॥6॥

भावार्थ:-(जाम्बवान् ने कहा-) हे तात! तुम जाकर इतना ही करो कि सीताजी को देखकर लौट आओ और उनकी खबर कह दो। फिर कमलनयन श्री रामजी अपने बाहुबल से (ही राक्षसों का संहार कर सीताजी को ले आएँगे, केवल) खेल के लिए ही वे वानरों की सेना साथ लेंगे॥6॥

छंद :

*** कपि सेन संग सँघारि निसिचर रामु सीतहि आनि हैं। त्रैलोक पावन सुजसु सुर मुनि नारदादि बखानि हैं॥ जो सुनत गावत कहत समुक्षत परमपद नर पावई। रघुबीर पद पाथोज मधुकर दास

तुलसी गावई॥

भावार्थ:-वानरों की सेना साथ लेकर राक्षसों का संहार करके श्री रामजी सीताजी को ले आएँगे। तब देवता और नारदादि मुनि भगवान् के तीनों लोकों को पवित्र करने वाले सुंदर यश का बखान करेंगे, जिसे सुनने, गाने, कहने और समझने से मनुष्य परमपद पाते हैं और जिसे श्री रघुवीर के चरणकमल का मधुकर (भ्रमर) तुलसीदास गाता है।

दोहा :

*** भव भेषज रघुनाथ जसु सुनहिं जे नर अरु नारि।तिन्ह कर सकल मनोरथ सिद्ध करहिं त्रिसिरारि॥30 क॥

भावार्थ:-श्री रघुवीर का यश भव (जन्म-मरण) रूपी रोग की (अचूक) दवा है। जो पुरुष और स्त्री इसे सुनेंगे, त्रिशिरा के शत्रु श्री रामजी उनके सब मनोरथों को सिद्ध करेंगे॥30 (क)॥

सोरठा :

*** नीलोत्पल तन स्याम काम कोटि सोभा अधिक। सुनिअ तासु गुन ग्राम जासु नाम अघ खग बधिक॥30 ख॥

भावार्थ:-जिनका नीले कमल के समान श्याम शरीर है, जिनकी शोभा करोड़ों कामदेवों से भी अधिक है और जिनका नाम पापरूपी पक्षियों को मारने के लिए बधिक (व्याधा) के समान है, उन श्री राम के गुणों के समूह (लीला) को अवश्य सुनना चाहिए॥30 (ख)॥ मासपरायण, तेईसवाँ विश्राम इति श्रीमद्रामचरितमानसे सकलकलिकलुषविध्वंसने चतुर्थः सोपानः समाप्त :। कलियुग के समस्त पापों के नाश करने वाले श्री रामचरित् मानस का यह चौथा सोपान समाप्त हुआ।

(किष्किंधाकांड समाप्त)